ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-5* June- 2021
Innovation The Research Concept

मन्नू भंडारी के 'आपका बंटी' उपन्यास में चित्रित समाज एवं स्त्री जीवन

Society and Women's Life Depicted in Mannu Bhandari's Novel 'Aapka Bunty'

Paper Submission: 05/06/2021, Date of Acceptance: 15/06/2021, Date of Publication: 24/6/2021

अनूषा निल्मिणी सल्वतुर
वरिष्ठ प्रवक्ता,
हिंदी विभाग,
कॅलणिय विश्वविद्यालय,
श्री लंका

सारांश

'आपका बंटी' मन्नू भंडारी का सर्वप्रथम स्वतंत्र उपन्यास है। नारी जीवन के बहुविधीय पक्षों पर अपनी सूक्ष्म अंतर्दृष्टि डालते हुए एक चित्रकार के समान उन्हें चित्रित करने में मन्नू भंडारी अधिक समर्थ दिखायी देती है। सामाजिक परिवेश में नारी ने स्वयं को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में घोषित करने की जो दृढ़ता अपनायी है, एक प्रकार से उसी का प्रस्तुतीकरण आलोच्य उपन्यास में हो गया है।'आपका बंटी' की कथा के मूल में स्त्री–पुरुष का द्वन्द्व है। इस द्वन्द्व के शिकार नादान 'बंटी' है, जो इन परिस्थितियों के लिए अधिकारी ही नहीं, अपितु इसके परिणामों का शिकार भी बना हुआ है। एक ओर उसकी माँ 'शकुन', अपने पति को वेदना पहुँचाने की आकांक्षा से अपने ही पुत्र बंटी को हथियार बना लेती है, दूसरी ओर पिता 'अजय' है, जो बंटी से प्रेम अवश्य करते हैं, किंतु प्रेम संबंधी व्यवहारों से वंचित रहना ही उचित समझते हैं। इस स्थिति में बंटी के लिए माता–पिता दोनों ही पराये हो जाते हैं। इस प्रकार आधुनिक जीवन–स्थितियों में अलग हुए पति–पत्नी का बच्चा 'बंटी' माता–पिता दोनों के साथ रहते हुए भी असुरक्षा का अनुभव करता है। अत्यंत संवेदनशील बालक बंटी एक सामाजिक–पारिवारिक समस्या के वातावरण में पला है। बंटी के द्वारा मन्नू भंडारी ने एक ओर सामाजिक विसंगति से पीड़ित बालकों की त्रासदी को दर्शाया है। दूसरी ओर अधिकार भावना के अहंवाद से ग्रसित मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी नारी–पुरुषों के संबंधों के खोखलेपन को व्यक्त किया है। अजय का जीवन भी त्रसित है। सारी उपलब्धियों के होते हुए भी शकुन के जीवन में भी एक अंतहीन एकाकीपन है। आपका बंटी उपन्यास में मन्नू भंडारी द्वारा चित्रित किये गये समाज तथा स्त्री जीवन पर चर्चा करना इस शोध–कार्य का मुख्य उद्देश्य है।

Aapka Bunty is Mannu Bhandari's first independent novel. Mannu Bhandari appears more capable in portraying them like a painter, putting her subtle insights on the multifarious aspects of women's life. In the social environment, the firmness adopted by the woman to declare herself as an independent entity, in a way, the same has been presented in the novel. At the core of the story of 'Aapka Bunty' is the conflict between men and women. The victim of this conflict is the innocent 'Bunty', who is not only the authority for these circumstances, but also remains a victim of its consequences. On the one hand his mother 'Shakun', with the desire to inflict pain on her husband, makes her own son Bunty a weapon, on the other hand there is father 'Ajay', who definitely loves Bunty, but must be deprived of love related practices consider appropriate. In this situation, both the parents become alien for Bunty. Thus in modern living conditions, the child of the separated husband and wife, Bunty, feels insecurity even when living with both the parents. Bunty, a very sensitive child, is brought up in an environment of socio-family problems. Mannu Bhandari through Bunty has depicted the tragedy of children suffering from social anomaly on the one hand. On the other hand, the middle class intellectuals, who are suffering from the egoism of the sense of entitlement, have expressed the hollowness of the relationship between men and women. Ajay's life also suffers. Despite all the achievements, there is an endless loneliness in Shakun's life. The main objective of this research work is to discuss the society and the life of women portrayed by Mannu Bhandari in the novel Aapka Bunty.

मुख्य शब्द : नारी जीवन, आधुनिक जीवन, सामाजिक परिवेश, बालक, नारी–पुरुषों के संबंध
Woman Life, Modern Life, Social Environment, Child, Man-Woman Relationship

प्रस्तावना

साधारणतया व्यक्तित्व, परंपरा, परिवेश, पैतृकता, प्रतिभा शक्ति आदि कई मिली–जुली प्रतिक्रियाओं की देन है। उसी प्रकार आपका बंटी की कथा–लेखिका मन्नू भंडारी का व्यक्तित्व भी अपने परिवेश के प्रभाव से रूपायित हुआ है। उनके जीवन और भारतीय स्वातंत्र्योत्तर समाज की नारी–स्थिति में अद्‌भुत साम्य देख सकते हैं। अपनी बड़ी उम्र में भी तनावपूर्ण वैवाहिक जीवन से मुक्ति पाकर अर्थात अपने निजी जीवन द्‌वारा मन्नू जी ने यह सिद्‌ध कर दिया है कि वे आधुनिक नारी की प्रतीक है। यह सर्व विदित है कि कथा–लेखिका मन्नू भंडारी के सर्जक व्यक्तित्व का निर्वाह भी अपने निजी परिवेश की टकराहट से पल्लवित हुआ है और आधुनिक हिंदी कथा–साहित्य में श्रीमती मन्नू भंडारी का विशिष्ट स्थान है। ऐसी मान्यता है कि उन्होंने जितना भी लिखा है, उन्हें तन्मयता, गहरी संलग्नता तथा ईमानदारी से लिखा है। मन्नू जी स्वयं यह मानती है कि वे अपनी रचनाओं में भोगे हुए यथार्थ का ही उद्‌घाटन करती है।

"...यही सच है कि मैं किसी पंथ से न तब जुड़ी थी, न बाद में .....मेरा जुड़ाव अगर रहा है तो अपने देश से.....चारों ओर फैली–बिखरी ज़िन्दगी से जिसे मैंने नंगी आँखों से ही देखा है, बिना किसी वाद का चश्मा लगाये और मेरी रचनाएँ इस बात का प्रमाण है।"

(एक कहानी यह भी, पृ. 199)

उक्त कथन से यह भलीभाँति स्पष्ट होता है कि मन्नू जी का कथा साहित्य मूलतः वैयक्तिक चेतना से ओतप्रोत, पाठक के अंतर्मन को छूकर संवेदना को सहज ही जागृत कर देनेवाला साहित्य है।

साधारणतया माँ–बाप मिलकर परिवार बनाते हैं और कई परिवारों के जमघट से एक समाज का निर्माण होता है। बंटी के लिए तो उसके जीवन रूपी जंजीर की पहली लड़ी ही लुप्त हो गयी है। इसलिए वह समाज से अलग एक विशेष तरह के निर्वासन में रहता है। उपन्यास में बंटी और शकुन का मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है। विशेषतः बच्चे के मन में उठने वाली भावनाओं तथा मनोवृत्तियों का विश्लेषण शकुन के चरित्र की प्रवृत्तियों के विश्लेषण के साथ हुआ है। उपन्यास की मुख्य पात्र शकुन एक कॉलेज की प्रिंसिपल है। वह अपने विचार और आर्थिक दोनों स्तर पर स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में उभरती है। इस व्यक्तित्व की टकराहट अजय से होती है। दोनों एक दूसरे से सामंजस्य नहीं बना पाते हैं। इस कारण परस्पर संबंधों में दूरी बढ़ती जाती है। परिवार की रचना का एक महत्वपूर्ण उद्‌देश्य बच्चे के व्यक्तित्व विकास के लिए आधार प्रदान करना भी होता है। लेकिन शकुन तथा अजय के अलग होने से इस परिवार का अस्तित्व ही मिट जाता है। बंटी का चरित्र एक 'कालजयी पात्र' के रूप में आता है। वह अपने काल की चेतना की उपज है। उपन्यास की पूरी कथा बंटी के इर्द–गिर्द ही घूमती है, तो इसका सटीक या संक्षिप्त नाम 'बंटी' भी हो सकता था। लेकिन मात्र 'आपका' शब्द जोड़कर लेखिका ने बंटी से अपनत्व का आभास पाठकों के भीतर जगाया है। वह हमारे नगर का, मध्यम वर्ग का, हमारे समाज का बंटी लगता है। यह बोध कराना शायद लेखिका का उद्‌देश्य भी रहा होगा।

विश्लेषण

बदलते सामाजिक परिवेश में नारी ने स्वयं को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में घोषित करने की जो दृढ़ता अपनायी है, उसका उदाहरण है इस उपन्यास की शकुन। वह नैतिकता के पारम्परिक घेरे में अपने को बाँधना नहीं चाहती। विशेष परिस्थितियों में एक पुरुष की अपेक्षा वह एकाधिक पुरुष का वरण करती है। शकुन डॉ. जोशी से शादी करती है। क्योंकि इसके पूर्व उसके पहले पति 'अजय' की दूसरी शादी हो चुकी थी। शकुन उच्च, शिक्षित, कामकाजी नारी है जिसके प्रभाव से शकुन में पारम्परिकता के विरोध करने का साहस उत्पन्न होता है। वह माँ की अपेक्षा कालेज की प्रिंसिपल के रूप में अधिक सफल होती है, एक अच्छी माँ न बनने का दुःख उसमें ज़रा सी भी नहीं है, इसके विपरीत प्रिंसिपल होने का गर्व ही उसमें अधिक है। अपने पति अजय की सामाजिक स्थिति से स्वयं ऊँचा बन जाने की खुशी उसे ज़्यादा है। वह कहती है–

"...सात वर्षों में विभागाध्यक्ष से प्रिंसिपल हो जाने के पीछे भी कहीं अपने को बढ़ाने से ज़्यादा अजय को गिराने की आकांक्षा थी।..."

(सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 284)

इस प्रकार व्यक्तिवादी चिंतन ने स्त्री–पुरुष दोनों को अहंवादी बना दिया है। वे एक दूसरे के जीवन–क्रमों में हस्तक्षेप करना नहीं चाहते। दूसरी ओर शकुन चक्की पीस–पीसकर बेटे का जीवन बनाने में अपने आपको स्वाहा देने वाली माँ नहीं थी। बल्कि स्वतंत्र व्यक्तित्व, आकांक्षा आजीविका के साधनों से तृप्त माँ थी। शकुन के इस चरित्र का स्वभाव उपन्यास के आरम्भ में ही उद्‌घाटित होता हुआ दिखाई देता है। कथा के आरम्भ का वक्ता बंटी है, इसलिए उसकी ही दृष्टि से अपनी माँ के वात्सल्य भरे स्त्री–रूप तथा कामकाजी स्त्री–रूप में अंतर स्पष्टतः परिलक्षित है–

"...वह जानता है, ममी अब पीछे मुड़कर नहीं देखेंगी। नपे–तुले कदम रखती हुई सीधी चलती चली जाएँगी। जैसे ही अपने कमरे के सामने पहुँचेंगी चपरासी सलाम ठोकता हुआ दौड़ेगा और चिक उठाएगा। ममी अंदर घुसेंगी और एक बड़ी सी मेज़ के पीछे रखी कुर्सी पर बैठ जाएँगी। मेज़ पर ढेर सारी चिट्‌ठियाँ होंगी। उस समय तक ममी एकदम बदल चुकी होंगी।..." (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 261)

यह एक आधुनिक नारी की तस्वीर है।यह वह नारी है जो अपने अतीत को वर्तमान में हावी होने नहीं देती और अपने दाम्पत्य जीवन की असफलता के कारण अपने कामकाजी जीवन में रुकावट नहीं आने देती। दूसरी ओर शकुन इस हद तक स्वतंत्रता चाहती है कि वह अपने

जीवन के साथ जो कुछ भी करें, उसपर किसी अन्य का प्रभाव न पड़ते देखना नहीं चाहती–

"...क्यों सुने वह अब इन लोगों की बातें? क्यों माने इन लोगों के सुझाव? अपने और बंटी के बारे में वह पूरी तरह स्वतंत्र है, कुछ भी सोचने के लिए, कुछ भी करने के लिए।..."

(सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 287)

शकुन की नौकरानी 'फूफी' और बंटी के दोस्त टीटू की माँ, शकुन और अजय के अलगाव को इतनी सहजता से नहीं लेते जितनी सहजता से वकील चाचा लेते हैं। वकील चाचा शिक्षित वर्ग से हैं, वे न सिर्फ दो पढ़े–लिखे समझदार व्यक्तियों में अलगाव को स्वाभाविक मानते हैं, बल्कि उनके द्वारा नये जीवन आरम्भ करने के प्रयत्न को भी बुरा नहीं मानते हैं। इस प्रकार व्यक्तिवादी चिंतन पर सामाजिक धारणा का उल्लेख लेखिका, वकील चाचा के शब्दों में करती है जिसमें आधुनिक चिंतन की झलक मिलती है–

"...अगर अजय अपनी ज़िंदगी शुरुआत करते हैं तो तुम क्यों नहीं कर सकती?..."

(सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 290)

वकील चाचा के मतानुसार इस अलगाव में शकुन का कोई दोष नहीं है। अतः वकील चाचा जब शकुन को समझाते हैं तो 'तुम जैसी औरत' विशेषण का प्रयोग करना नहीं भूलते–

"...ठीक है जो कुछ भी हुआ, वह बहुत सुखद नहीं है, पर वह अंतिम भी नहीं है। कम–से–कम तुम जैसी औरत के लिए वह अंतिम नहीं हो सकता, नहीं होना चाहिए।" (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 290)

वस्तुतः अपने लिए कुछ भी करने की भावना स्त्री–स्वतंत्रता की देन है। अंततः वकील चाचा के कहने पर शकुन ने डॉ. जोशी को अपने जीवन में इसलिए प्रवेश करने दिया कि अपनी खुशी के लिए उसकी आवश्यकता भी तो थी–

"...अजय को उसे दिखा ही देना है कि वह अगर एक नयी ज़िन्दगी की शुरुआत कर सकता है तो वह भी कर सकती है। नहीं, उसे किसी को कुछ नहीं दिखाना है।..." (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 292)

स्वतंत्र विचारों वाली स्त्री अपनी स्वतंत्रता को किसी कीमत पर खोना नहीं चाहती, अपने बच्चे की कीमत पर भी नहीं। शकुन अपनी स्वतंत्रता–पूर्ति हेतु समस्त कार्यों को सम्पन्न कराने के लिए अपने पुत्र का सहारा लेना चाहती है। वह सोचती है कि बच्चा अपने माता–पिता के मध्य पुल का काम करेगा। पर ऐसा हुआ नहीं। सामान्य परिस्थिति में शकुन स्नेह से परिपूर्ण एक माँ है। वह बंटी को पूर्ण सुख–सुविधापूर्ण जीवन उपलब्ध कराती है, पर जब उसे बंटी अपने जीवन–प्रवाह को अवरुद्ध कराने वाला एक बाधक जैसा नज़र आता है तब उसका मन आक्रोश से भर आता है। वह समझ नहीं पाती कि उसे एक सामान्य जीवन जीने का हक क्यों नहीं है। जब उसकी फूफी उसे दूसरी शादी के लिए टोकती है तो, शकुन को गुस्सा आ जाता है–

"...देखो फूफी, मैं तुम्हारी बहुत इज्जत करती हूँ। अपनी माँ से भी ज़्यादा,... पर माँ को भी मैंने कभी अपने बातों के बीच में नहीं बोलने दिया...मुझे याद नहीं वे कभी बोली हो।" एक क्षण को ममी रुकी। "यह अधिकार तो मैं किसी को दे नहीं सकती" (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 358)

शकुन पति से परित्यक्ता होने पर भी, रोती–बिलखती, उससे क्षमा नहीं माँगती। शकुन, डॉ. जोशी से प्रेम के बारे में जो कुछ पूछती है, उससे बात स्पष्टतः परिलक्षित है कि शकुन के प्रेम संबंधी विचारों में भी नारी स्वतंत्रता की भावना जुड़ी हुई है–

"...क्या प्रेम सचमुच ही मात्र एक शारीरिक आवश्यकता और एक सुविधाजनक ऐडजेस्टमेंट का ही दूसरा नाम है?..." (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 348)

शकुन विच्छेदिता है। उसका दस वर्षीय वैवाहिक जीवन कभी सुखी नहीं रहा। आलोचकों के अनुसार इसका कारण कुछ हद तक उसका अहंग्रस्त व्यक्तित्व ही है। इस व्यक्तित्व के कारण वह अपने पति, पुत्र सब को खो देती है। वह अजय की पत्नी होकर भी उसका प्रेम नहीं पा सकी। उसके बारे में वह स्वयं सोचती भी है–

"...उसने कई बार अपने और अजय के संबंधों के रेशे–रेशे उधेड़े हैं–सारी स्थिति में बहुत लिप्त होकर भी और सारी स्थति से बहुत तटस्थ होकर भी, पर निष्कर्ष हमेशा एक ही निकला है कि दोनों ने एक–दूसरे को कभी प्यार किया ही नहीं।..." (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 283)

वकील चाचा के हाथों भेजे गये अजय के हस्ताक्षर सहित तलाक से संबंधित कागज़ों को देखकर भी वैसा ही भाव शकुन की अंतरात्मा में उमड़ने लगा–

"...एक अध्याय था, जिसे समाप्त होना था और वह हो गया। दस वर्ष का यह विवाहित जीवन–एक अँधेरी सुरंग में चलते चले जाने की अनुभूति से भिन्न न था। आज जैसे एकाएक वह उसके अंतिम छोर पर आ गयी है। पर आ पहुँचने का संतोष भी तो नहीं है, ढकेल दिये जाने की विवश कचोट–भर है। पर कैसा है यह छोर? न प्रकाश, न वह खुलापन। न मुक्ति का एहसास। लगता है जैसे इस सुरंग ने उसे एक दूसरी सुरंग के मुहाने पर छोड़ दिया है–फिर एक और यात्रा–वैसा ही अंधकार, वैसा ही अकेलापन।..." (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 280)

व्यक्ति अपने अस्तित्व की प्रतिष्ठा में सभी कुछ छोड़कर 'क्षण' को पकड़कर जीने के लिए इतना आत्मकेन्द्रित हो गया है कि जीवन–विकास की सही दिशाएँ खोती जा रही है। ऐसी अवस्था शकुन के जीवन में भी आ जाती है। जब वह डॉ. जोशी के जीवन में प्रवेश करती है, तब बंटी के प्रति उसके प्रेम का रूप बदल जाता है। वह उसे बात–बात पर डाँटती, पीटती है। उसे लगता है कि अपनी ही संतान, अपने नये जीवन में बाधा बन गयी है। शकुन को प्रतीत होती है कि बंटी की हरकतें नये वैवाहिक जीवन के रसभंग के कारण बन गयी हैं–

"...बोल तू क्यों यह सब करने पर तुला हुआ है। क्यों अपनी और मेरी ज़िन्दगी में जहर घोलने पर तुला

हुआ है? कौन–सा कष्ट है तुझे यहाँ पर? क्या तकलीफ है?" (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 228)

इस प्रकार शकुन का चरित्र अपने अहं के लिए अपनी संतान को भी अपने से अलग कर देने वाली माँ के रूप में पाठकों के समक्ष आती है।

माता–पिता और बच्चे से बने त्रिकोण की तीसरी भुजा संतान ही है। साधारणतया पति–पत्नी के तलाक के बाद संतान की देख–रेख के लिए उसे माता के पास रहने दिया जाता है। वयस्क होने के पश्चात उसके चाह के अनुसार माता या पिता के पास रहने की अनुमति मिल जाती है। लेकिन ये सब तब होता है जब माता–पिता दोनों उसपर अपना अधिकार या कानूनी प्रार्थनापत्र लिखते हों, कभी ऐसी स्थिति भी आ सकती है कि माता–पिता दोनों में से कोई उसे रखने को तैयार न हो। ऐसे में संतान को क्या होगी? आलोच्य उपन्यास का 'बंटी' भी ऐसी स्थिति में है। वह बारी–बारी से माता और पिता दोनों के नये परिवार में अपनी जगह ढूँढ़ता है और खुद को अवांछित पाकर दुःख के सागर में डूबता जा रहा है। लेखिका ने यहाँ पर इस समस्या को नारी पर केन्द्रित कर दिया है। पाठकों के समक्ष यही प्रश्न उठता है कि शकुन ही क्यों अपना मन मार–मारकर अविवाहित रहे? दूसरी ओर यदि बच्चे को ऐसे वातारण में पलना पड़े तो, बाल्य अवस्था से ही किन–किन परिस्थितियों में उसके व्यक्तित्व को बढ़ावा दिया जाए, उसके बारे में उपदेश भरी बातें बकील चाचा के, डॉ. जोशी के तथा अजय के मुँह से शकुन को मिलती है, जो प्रत्येक माँ के लिए सोचने योग्य है।

"...ज़रा सोचो, स्कूल के अलावा बंटी सारे दिन तुम्हारे साथ रहता है या तुम्हारी उस फूफी के साथ। तुम्हारे यहाँ अधिकतर महिलाएँ ही आती होंगी। यानि उसकी क्या कंपनी है? बहुत हुआ पड़ोस के एक–दो बच्चों के साथ खेल लिया। पर एक आठ–नौ साल के ग्रोइंग बच्चे के लिए यह तो कोई बात नहीं हुई न। ही शुड ग्रो लाइक ए बॉय, लाइक ए मैन।..." (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 287)

"...यह तुम माँ–बेटों का चूमने–चाटने और गले में बाहें डाल–डालकर लिपटने वाला जो रवैया है वह अब बंद होना चाहिए।..." (सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 346)

"...छी–छी, इतने बड़े होकर भी ममी के बिना नहीं रह सकते। यह गंदी बात है बेटे। अब तुम्हें ममी के बिना रहने की आदत डालनी चाहिए। तुम क्या लड़की हो जो ममी से चिपटे–चिपटे फिरते हो?"

(सम्पूर्ण उपन्यास, पृ. 298)

व्यक्ति स्वातंत्र्य की चेतना आधुनिक समाज और परिवार में व्याप्त हो गयी है। इसका परिणाम है आणविक परिवार। मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी' में आणविक परिवार का चित्रण किया है। आज के आणविक परिवार में बड़ी विडम्बनात्मक स्थिति बच्चों की है। क्योंकि न ममी के घर में और न पापा के घर में, कहीं भी बंटी के लिए कोई अपनी जगह नहीं रह गयी है। उपन्यास के अंत में बंटी ममी–पापा से अलग होकर किसी होस्टल में भर्ती होने जा रहा है। पापा उसे लेकर जाते हैं। रास्ते में वह कोई सपना देखता है। सपने में कोई उससे पूछ रहा है कि वह कौन है? कहाँ से आया है? लेकिन वह उत्तर देने में असमर्थ होता है। पूर्ण रूप से वह उस सुप्तावस्था में भी पहचान नहीं पाता कि वह कौन है या उसके कोई अपने हैं। उसके सपने भी उसके अंतर्मन की अभिव्यक्ति है। इस प्रकार आणविक परिवार में बंटी के लिए कोई जगह नहीं मिल पाता। लेकिन उसके लिए ज़िम्मेदारी केवल शकुन ही है? वह विचारणीय बात है।

निष्कर्ष

आलोच्य उपन्यास मुख्य पात्र 'शकुन' की मनसिकता आधुनिक नारी की मानसिकता है। इससे मन्नू भंडारी ने शकुन के माध्यम से यह समझाने का प्रयत्न किया है कि विवाह के प्रसंग में आधुनिक नारी अपने आपको अब परिवार, समाज, जाति, वर्ग और आयु के बंधनों में बाँधने को तैयार नहीं मानती और बदलते सामाजिक परिवेश में नारी ने स्वयं को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में घोषित करने की दृढ़ता अपनायी है। लेकिन उसका परिणाम चाहे वह बुरा हो या अच्छा, समाज या परिवार को अवश्य भुगतना पड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *अग्रवाल, साधना (1995) वर्तमान हिंदी महिला कथा–लेखन और दाम्पत्य जीवन, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन।*
2. *अमरनाथ (2007) नारी मुक्ति का संघर्ष, नोएडा, रेमाधन प्रकाशन।*
3. *आरजू, मोजम्मिल हसन (1993) भारतीय महिला एवं आधुनिकीकरण, नयी दिल्ली, अजय शर्मा कॉमन वेल्थ पब्लिकेशन।*
4. *उपाध्याय, रमेश (2004) आज का स्त्री आन्दोलन, दिल्ली, शब्द संधान प्रकाशन।*
5. *उपाध्याय, विश्वामित्र, (1989) भारतीय क्रांतिकारी आन्दोलन और हिंदी साहित्य, वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन।*
6. *गुप्ता, उर्मिला (1978) स्वातंत्रयोत्तर कथा लेखिकाएँ, नयी दिल्ली, अनुराग प्रकाशन।*
7. *जैन, प्रतिभा और शर्मा, संगीता (1998) भारतीय स्त्रीः सांस्कृतिक संदर्भ, जयपुर, रावत पब्लिकेशन।*
8. *टंडन, प्रतापनारायन (1964) हिन्दी उपन्यास में कथा–शिल्प का विकास, लखनऊ हिन्दी साहित्य भंडार।*
9. *तलवार, स्वर्णकान्ता (1993) हिंदी उपन्यास और नारी समस्याएँ, इलाहाबाद, जयभारती प्रकाशन।*
10. *तिवारी, रामचंद्र (2011) हिंदी का गद्य साहित्य, वाराणासी, विश्वविद्यालय प्रकाशन।*
11. *तिवारी, विश्वनाथ प्रसाद (संपा.) (2006) बीसवी सदी का हिंदी साहित्य, नयी दिल्ली, भारतीय ज्ञानपीठ।*
12. *देसाई, पारुकान्त (2002) साठोत्तरी उपन्यास, कानपुर, चिंतन प्रकाशन।*
13. *देसाई, मीरा (1982) भारतीय समाज में नारी, दिल्ली, मैकमिलन प्रकाशन।*
14. *भंडारी, मन्नू (2009) सम्पूर्ण उपन्यास, नयी दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन।*

15. *मिश्रा, रामदरश (1992) हिंदी उपन्यास का अंतर्यात्रा, नयी दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।*
16. *यादव, राजेन्द्र (1997) उपन्यास–स्वरूप और संरचना, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन।*
17. *शर्मा, नासिया (2002) औरत के लिए औरत, दिल्ली, सामाजिक प्रकाशन।*
18. *शुक्ल, उमा (2009) भारतीय नारी अस्मिता की पहचान, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन।*
19. *सिंह, डॉ. त्रिभुवन (1979) हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, वाराणासी; हिन्दी प्रचारक संस्थान।*
20. *सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय (2002) भारतीय महिलाएँः नयी दिशाएँ, नयी दिल्ली, भारत सरकार, प्रकाशन विभाग।*

पत्रिकाएँ

21. *मिश्रा, अमरेन्द्र (संपा) गगनांचल, आधुनिकता बनाम नारी अस्मिता का सवाल– महेंद्र कुमार मिश्र, (1991) नयी दिल्ली; भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद।*
22. *यादव, राजेन्द्र (संपा) हंस, स्त्रियों के मन में अँधेरे कोने में– क्षमा शर्मा, (2000 दिसंबर) नयी दिल्ली; अक्षर प्रकाशन।*
23. *राकेशरेणु (संपा) आजकल, स्त्री विमर्श; नया प्रश्न; नयी चुनोतियाँ–वंदना कुमार, (2015 अक्तूबर) नयी दिल्ली; प्रकाशन विभाग।*
24. *राकेशरेणु (संपा) आजकल, भारतीय समाज में स्त्री का चेहरा– सुधा अरोड़ा, (2017 मार्च) नयी दिल्ली; प्रकाशन विभाग।*